International Journal of Information Movement Vol.3 Issue II (June 2018)
Website: www.ijim.in ISSN: 2456-0553 (online) Pages 62-66

समकालीन महिला लेखन के विविध स्वर

डॉ. ममता देवी
सहायक प्रवक्ता (हिन्दी)
माता सुन्दरी खालसा गर्ल्स कॉलेज, निसिंग (करनाल)

सार :
प्रस्तुत शोधपत्र में समकालीन महिला लेखन के विविध स्वर का अध्ययन किया गया है। इन दिनों समकालीन महिला लेखिकाओं और पुरुष लेखकों में भी नारी–विमर्श और नारी चेतना को लेकर गहरी चिंता और उसकी सशक्त अभिव्यक्ति कथा लेखन में की जा रही है। समकालीन महिला लेखन सम्पूर्ण साहित्य का न सिर्फ स्त्रीवादी नजरिये से पुनर्पाठ करता है, वरन् स्त्री–विमर्श की वैचारिकी को एक वृहद धरातल भी प्रदान करता है, जिसके माध्यम से जेंडरगत विमर्श को एक नयी दिशा मिली है। पारंपरिक रूप में स्त्री की साहित्य में कोई उपस्थिति नहीं थी, सिवाय पुरुष की नकार के रूप में, इस रूप में स्त्री या तो अच्छी होती थी या फिर बुरी, वह या तो पुरुष का सहयोग करती थी या बाधा देती थी। इस रूप में स्त्री–चरित्र जटिलताओं की अभिव्यक्ति नहीं करते। उनकी उपस्थिति भी महत्त्वपूर्ण और वास्तविक उपस्थिति नहीं हुआ करती थी। स्त्रीवादी कथारूप में स्त्रीवादियों ने इस सरलीकृत चरित्रांकन को तोड़ा है और इस प्रक्रिया में पितृसत्तात्मक विमर्श को चुनौती दी है।

विशेष शब्द : पितृसत्तात्मक, जड़ीभूत, प्रस्फुटित, तर्कप्रधान, जेंडरगत

भारतीय साहित्य में ही नहीं वरन् विश्व के साहित्यिक इतिहास में भी स्त्री लेखन को कभी मान्यता देने के प्रयास नहीं हुये, न ही कभी उन्हे गम्भीरता से लिया गया। यहाँ तक की उनके द्वारा लिखने को फुर्सत का शगल ही माना गया। प्रगतिशील कहे जाने वाले समाजों में भी उनके लिखने के लिये आवश्यक संसाधनों और समय की कमी बनी रही। तभी तो वर्जीनिया वुल्फ को मजबूर हो 'अपना कमरा' जैसी पुस्तक लिखनी पड़ी। उन्होंने लिखा है–''दुनिया ने जो उन पुरुषो से कहा था वह स्त्री से नहीं कहा, कि तुम चाहो तो लिखो,मुझे इससे कोई फर्क नहीं पड़ता। उससे तो दुनिया ने ठहाका मार कर यह कहा, कि लिखना? तुम्हारे लिखने से होगा क्या?।''[1]

वर्जीनिया वुल्फ ने ''पैसे और अपना एक कमरा होने पर'' अत्यधिक जोर दिया है जिसका अभिप्राय ''चिंतन करने की शक्ति ''और'' स्वंय के लिये सोचने की शक्ति'' से है जिससे कि स्त्रियों को वंचित रखा गया क्योकि उनकी पुरुषों मान्यता थी कि स्त्रियों का लिखना तो कुत्तों का पिछली टांगों पर चलना है। 1970 के दशक से शुरु हुआ समकालीन महिला लेखन उत्तरोत्तर काल में और भी व्यापक और मूलगामी होता गया तथा 1990 तक आते–आते उसमें गति और निरन्तरता भी आ गयी जो कि अनवरत् जारी है। इस समय आये लेखन को समकालीन इस अर्थ

में कहा जा सकता है क्योंकि समकालीनता वह समग्र चेतना है जो सामरिक सन्दर्भों, दबावों के साथ ही तत्कालीन समय की चेतना से उपजती है और यह समय ऐसा था जब वैश्विक स्तर पर नारीवादी आन्दोलन का व्यापक प्रभाव पड़ रहा था, साथ ही भारतीय सामाजिक सांस्कृतिक परिवेश में शिक्षा का व्यापक प्रसार होने से आधुनिकता की एक संस्कृति उपज रही थी जिसके आलोक में स्त्रियों ने भी अपने प्रति बरती जा रही दोहरी सामाजिक सांस्कृतिक नीतियों, प्रथाओं, परम्पराओं और कानूनों की पड़ताल करने के लिये लेखनी का सहारा लिया। स्त्रियों का लिखना निजी के साथ–साथ एक समष्टिगत प्रयास भी था। यह इसलिये भी अधिक महत्वपूर्ण था क्योंकि अब तक लिखा गया उन्नीसवी–बीसवीं सदी का स्त्री लेखन गैर साहित्यिक लेखन की कोटि में डाल दिया गया था और तत्कालीन समय की लेखिकाओं को महत्वहीन मानकर भुला दिया गया था। उस समय हिन्दी में स्त्री लेखिकाओं द्वारा लिखी गई प्रेम कविताओं' और प्रेम कहानियों की एक लम्बी परम्परा, होने के बावजूद उन्हे साहित्य की दृष्टि से नगण्य ही माना गया। सुधा सिंह कहती हैः–''स्त्रीवादी विषय वस्तुनस्ल, जाती और धर्म से परे जाती है। तत्कालीन समय में महिला लेखिकाओं जिसमें पंण्डिता रमाबाई, मनोरमा मजूमदार, श्रीमती कादम्बिनी आदि ने अनेक पत्र–पत्रिकाओं का सम्पादन कर स्त्रियों को जागरुक करने का सराहनीय रूप से प्रयास किया।

1.0 समकालीन महिला लेखन के विविध स्वर :

समकालीन महिला लेखन, उन्नीसवीं सदी के उत्तरार्द्ध में महिलाओं द्वारा लिखा गया साहित्य राष्ट्रीयता से ओतप्रोत तो था ही, साथ ही उनमें ' पितृसत्तात्मक मानसिकता' के विरुद्ध आवाज उठाने के बजाय उन 'जड़ीभूत रुढ़ियों ' को समाप्त करने पर जोर था जो स्त्री को प्रताड़ित कर बदतर जिन्दगी जीने पर मजबूर करती थीं। इसके अतिरिक्त समकालीन महिला लेखन का फलक कहीं व्यापक है, साथ ही यह पश्चिमी नारी–आन्दोलन से भी प्रभावित है। सुमन राजे ने 'हिन्दी साहित्य का आधा इतिहास' में वीर लक्ष्मी देवी को उद्धृत करते हुये लिखा है कि ''शारीरिक मानसिक और भावनात्मक रूप से स्त्रियों का दमन करने वाले पुरुषों से अपनी रक्षा करते हुये और साथ ही स्त्रियों को दबाकर रखने की पुरुषों में बद्धमूल दुष्प्रवृत्ति के उन्मूलन विधियों का अन्वेषण करने वाली चेतना ही स्त्रीवाद है।''[2]

आज का महिला लेखन न सिर्फ स्त्री को समानता, स्वतन्त्रता जैसे जीवन के मूलभूत अधिकारों को देने की माग करता है, वरन् उन सभी प्राकृतिक अधिकारों को भी चाहता है जो एक मनुष्य होने के नाते इस जीव–जगत में मानव मात्र को मिले हों इसी की, भावुकता से ओत–प्रोत अभिव्यक्ति के रूप में कविता, विचारशील गहन अभिव्यक्ति के लिये कहानी, यथार्थ जनक विद्रूपताओं के साथ कल्पनात्मक अभिव्यक्ति के लिये उपन्यास और वर्तमान जघन्य, विषमताओं से भरी परिस्थितियों के विश्लेषण के लिये आलोचना तथा निबन्ध के विविध स्वर स्त्री रचनाकारों द्वारा अपनाये जा रहे हैं। बांग्ला भाषा की सुप्रसिद्ध कवयित्री मतिलका सेन गुप्ता के शब्दों में,''जहा आधा देश व्यथा से कराहता हो,

वहा कविता उस व्यथा की अभिव्यक्ति का माध्यम बन जाती है, और इन अबोले, अनसुने अनुभवों के जरिये, जो पुरुष के एहसास से परे हैं, कविता अपने लिये स्त्री की भाषा को चुनती है। आज तक बनाये गये मक्खनी सुन्दरियों के चित्र कला और साहित्य के विशाल पटल पर से अचानक उठ बैठे हैं, और अपने शब्दों में बोल रहे हैं– ऐसी आवाज जिसमें व्यथा, कड़वाहट, ओध है और कभी–कभी प्रेम और सुख भी है, हमारे देश की हर बोली, हर प्रान्तीय भाषा में प्रस्फुटित हो रही है।[3]

आज जैसे–जैसे शिक्षा का प्रसार हो रहा है। बड़े–बड़े महानगरों में ही नहीं अपितु छोटे–छोटे कस्बों, गावों में भी स्त्रियां न सिर्फ जागरुक हो रही हैं, वरन् अपने खिलाफ होने वाले अन्याय, अत्याचारों के विरूद्ध व्यक्तिगत, सामूहिक हर स्तर पर खड़ी भी हो रही है, उन अधिकारों की माग कर रही हैं, जिनसे आज तक उन्हे वंचित रखा गया था, वे वंचना की साजिशों का पर्दाफाश कर रही हैं, जिसका परिणाम आज हमें स्त्री साहित्य के रूप में नजर आता है। तर्कप्रधान वर्तमान युग में खुद को भ्रम में रखे जाकर सामाजिक दायित्व के नाम पर जिस घोर निर्मम परिस्थितियों का उन्हें गुलाम बना दिया जाता है, अपनी कहानियों, कविताओं के माध्यम से उन तकलीफों, व्यथाओं और विषादों को सामाजिक मर्यादा के नाम पर छिपाने से उन्होंने इन्कार कर दिया है, अपने लैंगिक अनुभव एवं प्रसवकाल को भी स्त्री लेखन के माध्यम से उन्होंने बताया है। यह क्रान्तिकारी बदलाव की दिशा में स्वयं को अग्रसर करने का एक प्रयास है जिसका माध्यम उनकी लेखनी बनी है।

यह सच है कि महिला लेखन में 'स्त्री–विमर्श' स्त्री की दृष्टि से देखा गया और अभिव्यक्त किया गया ऐसा विमर्श है जो स्त्री की मुक्ति उसकी उन्नति के माध्यम से सम्पूर्ण मानव समाज की उन्नति का पथ प्रदर्शन करता है। यह विमर्श स्त्री को अपने लेखन के माध्यम से शेष सृष्टि से जुड़ने का विकल्प प्रदान करता है, क्योंकि एक स्त्री की पीड़ा उसका विद्रोह न सिर्फ उसका निज है, अपितु सम्पूर्ण शोषित, पीड़ित मानव समुदाय का भी है। शोषण उत्पीड़न की स्थितियाँ तो सार्वभौमिक हैं। इसलिये लगभग सभी भारतीय भाषाओं में हर विधा में 'स्त्री–विमर्श' के अन्तर्गत साहित्य लिखा जा रहा है। नवनीता देवसेन के शब्दों में तो ''कविता, स्वतन्त्रता और स्त्री वह सच्चाई है, जिसके सहारे सोजों से लेकर उन किसान स्त्रियों तक, जो सूर्योदय से पहले से पत्थर तोड़ती हुई अपने गीत गुनगुनाती हैं, सारे युगों के स्त्री कवि परिभाषित और परस्पर जुड़े हुये हैं। कविता अनिवार्यतः मुद्रित शब्द नहीं है, वह शब्दों की आत्मा में बसी हुयी है, वह स्त्रियों की आत्माभिव्यक्ति का सबसे प्राचीन रूप है। जब माताएँ अपने बच्चों को सुलाते हुये गाती हैं, तो उनके गीतों के शब्दों में उनके सारे आन्तरिक तनाव, सारी उद्विग्नतायें और उनके सपने मुक्त होते हैं। अनामिका अपनी एक कविता में स्त्री जीवन की सच्चाई बयां करती हैं–

मैं एक दरवाजा थी,/मुझे जितना पीटा गया,/मैं उतना खुलती गई।[4]

उड़िया कवयित्री सुचेता मिश्र 'हिम्मत' शीर्षक कविता में संघर्ष में हार न मानने तथा उसके लिये शक्ति संचित करने की बात करती हैं–

जंग के बाद भी खामोश नहीं बैठूगी/फिर से लडूंगी/सरहद लाघूगी/फिर से माटी, पानी, सूर्य, हवा से कहूगीं लौटा दो/मेरी हिम्मत मेरा सामर्थ्य/नहीं तो लोग सोचेंगे/मैं हार गई, खत्म हो गयी।[5]

कविता के क्षेत्र में अनामिका, गगन गिल, निर्मला पुतुल, कात्यायनी जैसी कवयित्रियों ने परचम लहराया। हालांकि कविता की संवेदनात्मकता से अधिक व्यापक जगह स्त्री–लेखन को कथा के क्षेत्र में मिली जिसके माध्यम से उन्होंने अपने जीवन के कटु यथार्थ की अभिव्यक्ति ही नहीं की वरन् गुलामी के कारणों की भी पड़ताल की कथा साहित्य के क्षेत्र में मन्नू भण्डारी, चित्रा मुद्‌गल, मैत्रेयी पुष्पा, कृष्णा सोबती, मृदुला गर्ग, नासिरा शर्मा, ममता कालिया तथा अल्पना मिश्र जैसी लेखिकाओं ने लेखन को एक दिशा दी। इनके नारी पात्र स्वचेतना और संघर्ष की कहानी बयां करते हैं। मन्नू भण्डारी की कहानी' मैं हार गई, 'यही सच है' ममता कालिया का उपन्यास–बेघर, मृदुला गर्ग का उपन्यास– कठगुलाब, चितकोबरा, चित्रा मुद्‌गल–आंवा, मैत्रेयी पुष्पा–इदन्नमम् आदि सभी में स्त्री स्वरों की ही अभिव्यक्तियाँ है।

'आवा' की नायिका नामिता और एक जमीन अपनी की अंकिता स्वतन्त्र निर्णय लेने में सक्षम हैं। अंकिता तो यहा तक कहती हैं कि– ''सुधांशू जी, औरत बोनसाई का पौधा नहीं है, जब जी चाहा उसकी जड़ें खोदकर उसे वापस गमले में रोप दिया।'' आज का स्त्री स्वर पूर्व के सत्री लेखन से मुखर हो चुका है। अब उसे कटु सत्य को उद्‌घाटित करने तथा जीवन की अपने द्वारा भोगे गये। विद्रूपताओं के चित्रण के लिये किसी दुराव या छिपाव की आवश्यकता नहीं है। आज की नारीवादी लेखिकाएँ सिर्फ स्त्री–मुक्ति की ही बात नहीं करती वरन् उसके माध्यम से सम्पूर्ण शोषित, पीड़ित मानव जाति की मुक्ताकांक्षी हैं।

महिला लेखन आत्माभिव्यक्ति का एक ऐसा हथियार हैं, जिसके द्वारा स्त्री ने समाज के दोहरें मापदण्डों, पक्षपाती कानूनों और अमानवीय परिस्थितियों की सच्चाई को पर्दे से उजागर कर दिया। आज तक स्त्रियों के विषय में पुरुष लेखकों ने ही अपना कब्जा बनाये रखा था, उन्होंने ही अपनी सुविधानुसार कभी स्त्री सौन्दर्य के अनेक मानक बना सुन्दरता के प्रतिमान गढ़े तो कभी देवी का महिमामण्डित रूप प्रदान किया, जब स्त्री ने स्वयं अपने निज की सच्चाई लिखने के लिये अपनी लेखनी उठायी तो उसने पितृसत्तावादी जर्जर सामाजिक संरचना को तो उद्‌घाटित किया ही, पुरुषों की उस दोहरी भूमिका का भी पर्दाफाश करते हुये बता दिया कि– बाहर की दुनिया में बड़ी–बड़ी सैद्धान्तिक, मानवतावादी बातें करने वाला पुरुष अपने ही घर के भीतर कितना हिंसक और अमानवीय है।

समकालीन महिला लेखन सम्पूर्ण साहित्य का न सिर्फ स्त्रीवादी नजरिये से पुनर्पाठ करता है वरन् स्त्री–विमर्श की वैचारिकी को एक वृहद् धरातल भी प्रदान करता है जिसके माध्यम से जेंडरगत विमर्श को एक नयी दिशा मिली है। पारम्परिक रूप में स्त्री की साहित्य में कोई उपस्थिति नहीं थी, सिवाय पुरुष की नकार के रूप में, इस रूप में स्त्री या तो अच्छी होती थी या फिर बुरी, वह या तो पुरुष का सहयोग करती थी या बाधा देती थी। इस रूप में स्त्री–चरित्र जटिलताओं

की अभिव्यक्ति नहीं करते। उनकी उपस्थिति भी महत्वपूर्ण और वास्तविक उपस्थिति नहीं हुआ करती थी। स्त्रीवादी कथारूप में स्त्रीवादियों ने इस सरलीकृत चरित्रांकन को तोड़ा है और इस प्रक्रिया में पितृसत्तात्मक विमर्श को चुनौती दी है। मनुष्य चूंकि एक सामाजिक प्राणी है इसलिए समाज में अपने अस्तित्व अपने कार्यों तथा अपनी भावनाओं को लेकर वह अपने आप से प्रश्न करता रहा है कि आखिर उसका होना समाज में क्या अर्थ रखता है? आज तक पुरुषों ने ही इस तरह के सवालों पर विचार किया है। अब स्त्रियाँ भी अपने लेखन के माध्यम से समाज में अपनी पहचान तथा अर्थवत्ता पर प्रश्न करने लगी हैं। परिणामस्वरुप स्त्री रचनाकारों द्वारा रचे पात्रों ने अब तक पुरुष लेखकों द्वारा पहनाये गये तमाम मुखौटों को उतार कर फेंक दिया और एक ऐसे पात्र का सृजन किया जो आज की जरुरत थी।

2.0 संदर्भ :

1 वर्जीनिया वुल्फ–अपना कमरा, पृ.77
2 वीर लक्ष्मी देवी, महाप्रस्थानमु कविता संकलन की भूमिका में।
3 मतिलका सेन गुप्ता–पुरुष निर्मित सौन्दर्य बोध और मै', पूर्वग्रह 104
4 नवनीता देवसेन, पूर्वाग्रह, 104
5 समकालीन भारतीय साहित्य, जुलाई–अगत्त, 1996, पृ. 61